

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 5 अध्याय 22: सूर्य, चन्द्रमा और ग्रहों की गति

22 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



राजा परीक्षित के समक्ष विराजमान, श्रीशुक काल के महान् चक्र को उद्घाटित करते हैं — सूर्य, चन्द्रमा और ग्रह मेरु पर्वत तथा ध्रुवतारा के चारों ओर अपने-अपने नियत मार्गों में घूमते हुए, सब उस भगवान् द्वारा धारित और संचालित जो सबकी आत्मा हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पंचम स्कन्ध का यह बाईसवाँ अध्याय आकाश को ही एक शास्त्र बना देता है। राजा परीक्षित, सूर्य की वार्षिक यात्रा सुनकर, एक कोमल, विस्मयपूर्ण प्रश्न पूछते हैं — सूर्य एक ओर चलता प्रतीत होते हुए भी वस्तुतः दूसरी ओर कैसे चल सकता है? और श्रीशुक इसका उत्तर शुष्क माप से नहीं,

अपितु आराधना से देते हैं, हमें दिखाते हुए कि आकाश की प्रत्येक घूमती ज्योति भगवान् की ही आज्ञा से घूमती है। ऋतुओं को व्यवस्थित करता सूर्य, देवताओं और पितरों तथा हरे-भरे पौधों के लिए अपना अमृत उँडेलता चन्द्रमा, अपना-अपना नियत मार्ग रखते तारे और भ्रमणशील ग्रह, और भगवान् विष्णु के धाम की सदा परिक्रमा करते सात ऋषि — यह सब वही परमपुरुष हैं, जो प्रत्येक प्राणी के कल्याण के लिए शान्तिपूर्वक काल को माप रहे हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 5 (पंचम स्कन्ध)
- अध्याय: 22 (द्वाविंश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: सूर्य, चन्द्रमा और ग्रहों की गति
- प्रमुख वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी (श्रीशुक), राजा परीक्षित को उत्तर देते हुए
- प्रमुख श्रोता: राजा परीक्षित — और यह संवाद सूत गोस्वामी द्वारा नैमिषारण्य में एकत्रित ऋषियों को पुनः सुनाया जाता है
- मुख्य स्थल: हस्तिनापुर में गंगा का तट, जहाँ श्रीशुक राजा को उपदेश देते हुए महान् नक्षत्र-मण्डल की व्यवस्था उद्घाटित करते हैं
- केन्द्रीय विषय: किस प्रकार सूर्य एक ओर चलता प्रतीत होते हुए वस्तुतः दूसरी ओर चलता है; भगवान् काल के रूप में वर्ष को मासों और ऋतुओं में विभाजित करते हुए; चन्द्रमा अमृत का मूर्त रूप और समस्त प्राणियों का पोषक; और तारे तथा शुक्र, बुध, मंगल, बृहस्पति, शनि और सप्तर्षियों की कक्षाएँ, सब भगवान् द्वारा काल-चक्र से बँधे हुए
- प्रमुख श्लोक-सीमा: स्कन्ध 5, अध्याय 22, श्लोक 1-17
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय से

इक्कीसवें अध्याय में, श्रीशुक ने आकाश में सूर्य के वार्षिक मार्ग का वर्णन किया और मानसोत्तर पर्वत के विषय में बताया, जिसके चारों ओर दिशाओं के लोकपालों की नगरियाँ स्थित हैं। उन्होंने सूर्यदेव के देदीप्यमान, एक-पहिये वाले रथ की चर्चा की, जो अपने सात घोड़ों से खिंचा है, जिसके आगे अरुण विराजमान हैं, और उन ऋषियों, गन्धर्वों तथा अन्य दिव्य प्राणियों की, जो उसके साथ चलते और सूर्य के रूप में भगवान् की आराधना करते हैं। सूर्य की उस महान् यात्रा का वह वर्णन यहाँ राजा के प्रश्न की ओर स्वाभाविक रूप से ले आता है, कि सूर्य और अन्य ज्योतियाँ वस्तुतः किस प्रकार चलती हैं।

राजा का विस्मयपूर्ण प्रश्न

सूर्य किस प्रकार आकाश में यात्रा करता है, यह सुनकर राजा परीक्षित विस्मय से उपजे एक सन्देह के साथ अपने गुरु की ओर मुड़े। सूर्य की गति के विषय में दो बातें एक साथ कही गई थीं, और राजा के मन को वे परस्पर असंगत प्रतीत हुईं। एक सच्चे जिज्ञासु की विनम्रता से उन्होंने पूछा कि इस प्रतीयमान विरोध को हम किस प्रकार ठीक-ठीक समझें।

राजोवाच

यदेतद्भगवत आदित्यस्य मेरुं ध्रुवं च प्रदक्षिणेन परिक्रामतो राशीनामभिमुखं प्रचलितं चाप्रदक्षिणं भगवतोपवर्णितममुष्य वयं
कथमनुमिमिमीहिति ॥ १ ॥

*rājovāca yad etad bhagavata ādityasya meruṁ dhruvaṁ ca pradakṣiṇena parikrāmato rāśīnām
abhimukhaṁ pracalitaṁ cāpradakṣiṇaṁ bhagavatopavarṇitam amuṣya vayaṁ katham
anumimīmahīti.*

अर्थ: राजा ने कहा: आपने तेजस्वी सूर्य को मेरु पर्वत और ध्रुवतारा दोनों को अपनी दाहिनी ओर रखते हुए परिक्रमा करता प्रतीत होते हुए वर्णित किया, और फिर भी नक्षत्रों के सम्मुख वस्तुतः चलते हुए, मेरु और ध्रुवतारा को अपनी बाईं ओर रखकर। इसे हम किस प्रकार समझें और स्वीकार करें? (स्कन्ध 5, अध्याय 22, श्लोक 1)

श्रीशुक ने यह प्रश्न आनन्द से ग्रहण किया, क्योंकि इसने भगवान् की काल-व्यवस्था के विषय में बोलने का मार्ग खोल दिया। उन्होंने एक सरल और सुन्दर दृष्टान्त से उत्तर दिया। विचार कीजिए, उन्होंने कहा, कुम्हार के घूमते चाक पर रेंगती चींटियों का। चींटियाँ चाक के साथ घुमाई जाती हैं, फिर भी उनकी अपनी एक गति होती है, क्योंकि वे उस पर कभी एक स्थान पर और कभी दूसरे स्थान पर दिखती हैं। वैसे ही, सूर्य और अन्य ग्रह काल के महान् चक्र पर स्थित हैं, जो नक्षत्रों और राशियों से चिह्नित हैं; वे उस चक्र के साथ ध्रुवतारा और मेरु पर्वत के चारों ओर घुमाए जाते हैं, फिर भी प्रत्येक अपना पृथक् मार्ग रखता है — इसका प्रमाण स्वयं आकाश में मिलता है, जब हम उन्हें किसी एक चिह्न पर देखते हैं और थोड़े ही समय बाद किसी दूसरे चिह्न पर पाते हैं।

स होवाच

यथा कुलालचक्रेण भ्रमता सह भ्रमतां तदाश्रयाणां पिपीलिकादीनां गतिरन्यैव प्रदेशान्तरेष्वप्युपलभ्यमानत्वादेवं नक्षत्रराशिभिरुपलक्षितेन
कालचक्रेण ध्रुवं मेरुं च प्रदक्षिणेन परिधावता सह परिधावमानानां तदाश्रयाणां सूर्यादीनां ग्रहाणां गतिरन्यैव नक्षत्रान्तरे राश्यन्तरे
चोपलभ्यमानत्वात् ॥ २ ॥

*sa hovāca yathā kulāla-cakreṇa bhramatā saha bhramatām tad-āśrayāṇām pipīlikādīnām gatir
anyaiva pradeśāntareṣv apy upalabhyamānatvād evaṁ nakṣatra-rāśibhir upalakṣitena kāla-
cakreṇa dhruvaṁ meruṁ ca pradakṣiṇena paridhāvatā saha paridhāvamānānām tad-
āśrayāṇām sūryādīnām grahāṇām gatir anyaiva nakṣatrāntare rāśy-antare
copalabhyamānatvāt.*

अर्थ: श्रीशुक ने कहा: जैसे कुम्हार के घूमते चाक पर रेंगती चींटियाँ उसके साथ घुमाई जाती हैं और फिर भी उनकी अपनी एक गति होती है — क्योंकि वे उस पर भिन्न-भिन्न स्थानों पर दिखती हैं — वैसे ही सूर्य और अन्य ग्रह, नक्षत्रों और राशियों से चिह्नित काल-चक्र पर स्थित होकर और उसके साथ ध्रुवतारा तथा मेरु पर्वत की परिक्रमा करते हुए, अपना एक पृथक् मार्ग रखते हैं, जो इससे स्पष्ट है कि वे कभी एक नक्षत्र और राशि से, कभी दूसरे से जुड़े दिखते हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 22, श्लोक 2)



राजा परीक्षित पूछते हैं कि सूर्य एक ओर चलता प्रतीत होते हुए भी वस्तुतः दूसरी ओर कैसे चल सकता है, और श्रीशुक कुम्हार के घूमते चाक पर घुमाई जाती चींटियों के दृष्टान्त से उत्तर देते हैं, जिनमें से प्रत्येक अपना मार्ग रखती है (श्लोक 1-2)।

भगवान् काल के रूप में, वर्ष को व्यवस्थित करते हुए

तब श्रीशुक ने राजा की दृष्टि घूमते चक्र से उठाकर उस पर टिका दी जो उसे घुमाता है। यह सूर्य, दिनों और ऋतुओं की यह नापी हुई चाल, कोई अन्धा यन्त्र नहीं। यह स्वयं तेजस्वी भगवान् नारायण हैं, सबसे प्राचीन पुरुष, वही जिन्हें वेद और विवेकी जन इतनी उत्कण्ठा से खोजते हैं। समस्त प्राणियों के कल्याण के लिए वे अपने ही शरीर को — काल के रूप में प्रकट होकर, जो तीनों वेदों का विषय और प्रत्येक समयोचित कर्म का आधार है — बारह भागों में, बारह मासों में विभाजित करते हैं, और छह ऋतुओं के द्वारा वे बारी-बारी से उनके अपने-अपने स्वभाव — ताप और शीत, वर्षा और वायु — प्रकट करते हैं, ताकि प्रत्येक जीव अपने पूर्वकर्मों का फल ऋतु के अनुसार भोग सके।

श्रीशुक यहाँ यह स्पष्ट करने में सावधान हैं कि सूर्य स्वयं से अस्तित्व में नहीं आया — वह एक प्रार्थना के उत्तर में प्रदत्त हुआ। वेदों में पारंगत महान् ऋषियों ने, समस्त लोकों के कल्याण की कामना से, एक बार अपने हृदय भगवान् नारायण की ओर आराधना में मोड़े; और वे, उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर, इसी सृष्टि में साक्षात् सूर्य के रूप में अवतरित हुए, दो प्रयोजनों को एक साथ पूर्ण करने के लिए — समस्त ग्रहों का पोषण और कल्याण करने के लिए, और प्रत्येक आत्मा के सकाम कर्मों को शुद्ध करने के लिए, पूर्वकर्मों के संचित मैल को इस प्रकार जलाकर जैसे सूर्य का प्रकाश अन्धकार को भस्म कर देता है। सूर्य का प्रतिदिन उदय होना इसलिए प्रकृति की कोई आकस्मिक घटना नहीं, अपितु उसी प्राचीन प्रार्थना का अब भी चलता हुआ उत्तर है — भगवान् उन ऋषियों को दिया अपना वचन निभाते हुए, प्रातः-प्रातः सम्पूर्ण सृष्टि को गर्म करते और शुद्ध करते हुए, हमारे ही कल्याण के लिए (श्लोक 3)।

और इसलिए, श्रीशुक ने आगे कहा, जो इस भगवान् की आराधना करते हैं — तीनों वेदों में सिखाए गए उच्च और निम्न पवित्र कर्मकाण्डों के द्वारा (इन्द्र आदि देवताओं के रूप में), और उन योग-साधनाओं के द्वारा जिनसे हृदय परमपुरुष के निकट पहुँचता है — वर्णों और आश्रमों के लिए नियत मार्ग का अनुसरण करते हुए, वे विधिपूर्वक और सहज ही अपनी वांछित कृपा प्राप्त करते हैं, चाहे वह उच्च लोकों का सुख हो या आत्मा की परम मुक्ति। सूर्य के रूप में ध्रुलोक और भूलोक के बीच के अन्तरिक्ष में स्थित काल-चक्र में प्रवेश करके, सबकी आत्मास्वरूप भगवान् राशियों के नाम से जाने जाने वाले बारह मासों में से होकर बीतते हैं। एक मास, विवेकी जन कहते हैं, दो पक्षों की एक जोड़ी है, एक शुक्ल और

एक कृष्ण; जिस अंश में वे अपने मार्ग का छठवाँ भाग तय करते हैं वह एक ऋतु है; आकाश का आधा भाग तय करने का समय एक अयन है; और सम्पूर्ण आकाश का चक्कर, जो मन्द, तीव्र या मध्यम गति से पूर्ण होता है, अपने विविध मापों में वर्ष है — संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और वत्सर।



तेजस्वी भगवान्, सूर्य के रूप में, काल-चक्र में प्रवेश करते हैं और अपने ही शरीर को बारह मासों और छह ऋतुओं में विभाजित करते हैं, ताकि प्रत्येक प्राणी अपने पूर्वकर्मों का फल ऋतु के अनुसार भोग सके (श्लोक 3-7)।

चन्द्रमा, वह अमृत जो सबका पोषण करता है

तब श्रीशुक ने अपनी दृष्टि और ऊपर, कोमल चन्द्रमा पर उठाई। सूर्य के मण्डल से एक लाख योजन ऊपर चन्द्रमा दिखता है, और सूर्य से भी तीव्र गति से चलता हुआ, समस्त नक्षत्रों का अग्रणी होता है। जो कुछ सूर्य पूरे वर्ष में पूरा करता है वह चन्द्रमा एक ही मास में पूर्ण कर लेता है; जो सूर्य एक मास में तय करता है वह चन्द्रमा कुछ अधिक दो दिनों में तय कर लेता है; और जो सूर्य एक पक्ष में तय करता है वह चन्द्रमा एक ही दिन में तय कर लेता है।

एवं चन्द्रमा अर्कगभस्तिभ्य उपरिष्टाल्लक्षयोजनत उपलभ्यमानोऽर्कस्य संवत्सरभुक्तिं पक्षाभ्यां मासभुक्तिं सपादक्षाभ्यां दिनेनैव पक्षभुक्तिमग्रचारी द्रुततरगमनो भुङ्क्ते ॥ ८ ॥

evam candramā arka-gabhastibhya upariṣṭāl lakṣa-yojanata upalabhyamāno 'rkasya saṁvatsara-bhuktiṁ pakṣābhyāṁ māsā-bhuktiṁ sapādarkṣābhyāṁ dinenaiva pakṣa-bhuktim agracārī drutatara-gamano bhuṅkte.

अर्थ: इस प्रकार चन्द्रमा, सूर्य की किरणों से एक लाख योजन ऊपर दिखता और अधिक तीव्रता से चलता हुआ, सूर्य से आगे जाता है; जो चक्कर सूर्य एक वर्ष में लगाता है उसे वह दो पक्षों में पूर्ण करता है, जो सूर्य एक मास में तय करता है उसे वह कुछ अधिक दो दिनों में, और जो सूर्य एक पक्ष में तय करता है उसे एक ही दिन में तय कर लेता है। (स्कन्ध 5, अध्याय 22, श्लोक 8)

शुक्ल पक्ष में अपनी बढ़ती आभा और कृष्ण पक्ष में अपने घटते तेज से, चन्द्रमा देवताओं और पितरों के दिन और रात को नियत करता है, और, समस्त प्राणि-जातियों का जीवन तथा पोषक होकर, वह तीस मुहूर्तों में प्रत्येक नक्षत्र से होकर बीतता है। श्रीशुक यहाँ यह उद्धाटित करने के लिए रुकते हैं कि यह आकाश की एक सुन्दर देह मात्र नहीं है — इस कोमल किरण में स्वयं भगवान् निवास करते हैं, और उनका प्रत्येक नाम केवल उस एक और उपकार की ओर संकेत करता है जो वे उदारतापूर्वक देते हैं — मन को, खेत की उपज को, श्वास लेने वाले प्रत्येक प्राणी को।

य एष षोडशकलः पुरुषो भगवान्मनोमयोऽन्नमयोऽमृतमयो देवपितृमनुष्यभूतपशुपक्षिसरीसृपवीरुधां प्राणाप्यायनशीलत्वात्सर्वमय इति वर्णयन्ति ॥ १० ॥

ya eṣa ṣoḍaśa-kalaḥ puruṣo bhagavān manomayo 'nnamayo 'mṛtamayo deva-pitr-manuṣya-bhūta-paśu-pakṣi-sarīṣpa-vīrudhāṁ prāṇāpy āyana-śīlatvāt sarvamaya iti varṇayanti.

अर्थ: यह तेजस्वी सत्ता जो चन्द्रमा के रूप में प्रकट होती है, सोलह कलाओं वाली, मन की अधिष्ठात्री देवता, समस्त प्राणियों का अन्न और अमृत का मूर्त रूप है; स्वभाव से देवताओं और पितरों, मनुष्यों और भूतों, पशुओं और पक्षियों, सरीसृपों और पौधों के जीवन का पोषक होकर, वह सबके साथ एक है — ऐसा विवेकी जन कहते हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 22, श्लोक 10)



सूर्य से ऊपर चन्द्रमा अपना रजत प्रकाश उँडेलता है, वह अमृत का मूर्त रूप जो देवताओं और पितरों, मनुष्यों, पशुओं और पक्षियों, तथा हरे-भरे पौधों का पोषण करता है (श्लोक 8-10)।

नक्षत्र और भ्रमणशील ग्रह

और भी ऊपर, चन्द्रमा के मार्ग से बहुत परे, श्रीशुक ने राजा की दृष्टि उस विशाल तारा-मण्डल की ओर मोड़ी जो चान्द्र-गणना को मापता है — अभिजित् सहित अठाईस की संख्या में, प्रत्येक भगवान् के अपने काल-चक्र पर एक स्थिर बिन्दु, न कि अपनी इच्छा से चलने वाला यात्री। मेरु पर्वत सदा उनकी दाहिनी ओर ही रहता है जब वे उस घूर्णन के साथ ले जाए जाते हैं।

tata upariṣṭād dvi-lakṣa-yojanato nakṣatrāṇi meruṁ dakṣiṇenaiva kālāyana īśvara-yojitāni sahābhijitāṣṭā-vimśatih.

अर्थ: चन्द्रमा से बहुत ऊपर अठाईस नक्षत्र हैं, अभिजित् सहित, जिन्हें भगवान् ने काल-चक्र से बाँध रखा है; अपना कोई पृथक् मार्ग न रखते हुए, वे मेरु पर्वत को केवल अपनी दाहिनी ओर रखकर घूमते हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 22, श्लोक 11)

नक्षत्रों से परे, प्रत्येक अपने से पूर्व वाले से ऊपर स्थापित, श्रीशुक्र ने भ्रमणशील ग्रहों का उनके क्रम में नाम लिया। वहाँ उशना, शुक्र हैं, जो सूर्य के समान तीव्र, मन्द और मध्यम गति से चलते हैं — कभी आगे जाते, कभी पीछे चलते, कभी साथ चलते — प्रायः सदा वर्षा के लाने वाले, प्राणियों पर सदा कृपालु, और उन ग्रहों के प्रभाव को शान्त करने वाले माने जाते हैं जो वर्षा को रोकते हैं। शुक्र से परे बुध हैं, चन्द्रमा की सन्तान, अधिकांशतः सौम्य और कल्याणकारी; किन्तु जब वे सूर्य को लाँघ जाते हैं तब आँधी, बादल और सूखे की सूचना देते हैं। बुध से परे अंगारक, मंगल हैं, जो तीन पक्षों में राशिचक्र की एक राशि से होकर बीतते हैं, यदि वे वक्री न हों, और जो एक अशुभ ग्रह माने जाते हैं, प्रायः कष्ट की सूचना देते हुए। मंगल से परे तेजस्वी बृहस्पति हैं, जो एक वर्ष में एक राशि से होकर बीतते हैं, यदि वक्री न हों, और सामान्यतः ब्राह्मणों के लिए शुभ होते हैं। और बृहस्पति से परे शनैश्चर, शनि हैं, वह मन्दगति वाले, जो प्रत्येक राशि में तीस मास ठहरते हैं और इसलिए प्रायः सबके लिए चिन्ता का कारण होते हैं।



वलय के परे देदीप्यमान वलय, नक्षत्र और भ्रमणशील ग्रह — शुक्र, बुध, मंगल, बृहस्पति और मन्दगति शनि — अपनी नियत कक्षाएँ रखते हैं, प्रत्येक भगवान् द्वारा काल-चक्र से बाँधा हुआ (श्लोक 11-16)।

विष्णु के धाम के चारों ओर सप्ताषे

इस महान् आरोहण के शिखर पर, शनि से भी बहुत ऊपर, श्रीशुक ने सात ऋषियों को स्थापित किया, वे सात दीप्तिमान तारे जिन्हें हम आकाश में एक साथ देखते हैं। समस्त प्राणियों के कल्याण का सदा चिन्तन करते हुए, वे श्रद्धापूर्ण परिक्रमा में चलते हैं, भगवान् विष्णु के परम धाम — ध्रुवतारा, ध्रुवलोक, घूमते आकाश के स्थिर केन्द्र — के चारों ओर घूमते-घूमते।

तत उत्तरस्मादृष्य एकादशलक्षयोजनान्तर उपलभ्यन्ते य एव लोकानां शमनुभावयन्तो भगवतो विष्णोर्यत्परमं पदं प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति ॥ १७

॥

tata uttarasmād ṛṣaya ekādaśa-lakṣa-yojanāntara upalabhyante ya eva lokānām śam anubhāvayanto bhagavato viṣṇor yat paramaṁ padaṁ pradakṣiṇaṁ prakramanti.

अर्थ: शनि से ग्यारह लाख योजन ऊपर सात ऋषि दिखते हैं, जो समस्त प्राणियों के कल्याण का सदा चिन्तन करते हुए, भगवान् विष्णु के परम धाम — ध्रुवतारा, ध्रुवलोक — की परिक्रमा में चलते हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 22, श्लोक 17)

इस प्रकार आकाश की सम्पूर्ण देदीप्यमान व्यवस्था हमें अन्ततः एक महान् आराधना के रूप में दिखाई देती है — ऋषि स्वयं भगवान् के ही धाम की सदा परिक्रमा करते हुए, और अपने नीचे की समस्त घूमती ज्योतियों को उसी मौन श्रद्धा में खींचते हुए।



नक्षत्र-मण्डल के शिखर पर, सात ऋषि ध्रुवलोक — भगवान् विष्णु के परम धाम — के चारों ओर निरन्तर परिक्रमा में चलते हैं, समस्त प्राणियों के कल्याण का चिन्तन करते हुए (श्लोक 17)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

समस्त काल भगवान् का ही शरीर है। वर्ष का घूमना, बारह मास, छह ऋतुएँ — ये कोई रिक्त माप नहीं, अपितु भगवान् नारायण का ही स्वरूप हैं, प्रत्येक आत्मा के कल्याण के लिए विभाजित। ऋतुओं को बदलते देखना भगवान् को शान्तिपूर्वक कार्य करते देखना है।

जो प्रतीत होता है और जो है, वे सदा एक नहीं होते। सूर्य एक ओर चलता प्रतीत होता है और वस्तुतः दूसरी ओर चलता है; कुम्हार का चाक अपनी चींटियों को घुमाता है जबकि वे अपना मार्ग रेंगती हैं। श्रीशुक हमें सिखाते हैं कि हम प्रतीति के परे उस गहरी व्यवस्था को देखें जो भगवान् द्वारा धारित है।

चन्द्रमा भगवान् के अमृत की एक धारा है। वह कोमल प्रकाश जो पौधों को पकाता है, पितरों को धारण करता है और प्रत्येक प्राणी को हर्षित करता है, अमृत का साक्षात् मूर्त रूप दिखाया गया है, सम्पूर्ण जीवन के साथ एक। भगवान् की करुणा सबसे छोटे हरे-भरे पौधे तक पहुँचती है।

प्रत्येक ज्योति अपना नियत स्थान रखती है। तीव्र चन्द्रमा से लेकर मन्द शनि तक, प्रत्येक ग्रह उसके लिए नियत माप में चलता है, भगवान् द्वारा काल-चक्र से बँधा हुआ। आकाश में व्यवस्था और देखभाल है, और कुछ भी यों ही नहीं भटकता।

समस्त सृष्टि भगवान् के धाम की परिक्रमा करती है। सात ऋषि सदा ध्रुवलोक की, विष्णु के परम आसन की, परिक्रमा करते हैं, सबके कल्याण का चिन्तन करते हुए। सर्वोच्च ज्ञान, यह शास्त्र दिखाता है, भगवान् की अनन्त परिक्रमा है।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में एक दुर्लभ और कोमल शान्ति है। हम रात्रि के आकाश को विशाल, ठण्डा और उदासीन मानने के इतने अभ्यस्त हैं, किन्तु श्रीशुक हमारी दृष्टि उठाते हैं और हमें कुछ पूर्णतया भिन्न दिखाते हैं — एक ऐसा आकाश जो भगवान् की उपस्थिति से गर्म है। वह सूर्य जो हमारे दिनों को मापता है, वह चन्द्रमा जो खेत और वन पर अपना अमृत उँडेलता है, वे ग्रह जो अपने धैर्यपूर्ण चक्करों में चलते हैं, वे ऋषि जो स्थिर ध्रुवतारा की निरन्तर आराधना में परिक्रमा करते हैं — यह सब एक जीवित व्यवस्था है, धारित और घुमाई गई उस भगवान् द्वारा जो सबकी आत्मा हैं। कुछ भी उनकी देखभाल से बाहर नहीं; चन्द्रमा केवल देवताओं का ही नहीं, अपितु पशुओं और पक्षियों और विनम्र पौधों का भी पोषण करता है। जब हम आकाश को इस प्रकार देखना सीख लेते हैं, तब हमारे अपने दिनों का छोटा-सा चक्र भी रूपान्तरित हो जाता है। हमारी ऋतुओं का बदलना, हमारे वर्षों का बीतना, वह साधारण सूर्योदय — ये उसी हाथ का स्पर्श बन जाते हैं जो ध्रुवतारा को स्थिर रखता है। ऐसी व्यवस्था में जीना शून्य में खोया एक कण होना नहीं, अपितु एक पिता के घर में धारित एक बालक होना है, जहाँ तारे भी अपना स्तुति का पहरा रखते हैं। हमें केवल उनके साथ जुड़ना है, अपने हृदयों को, जैसे वे घूमते हैं, भगवान् की ओर मोड़ते हुए।

एक दैनिक भक्ति-साधना

आज, प्रातःकाल या रात्रि के आकाश के नीचे बाहर निकलिए और कुछ शान्त क्षणों के लिए केवल ऊपर देखिए। जब आप सूर्य, चन्द्रमा या तारों को देखें, तब श्रीशुक की शिक्षा स्मरण कीजिए — कि उनमें से प्रत्येक भगवान् की आज्ञा से घूमता है, जो सबकी आत्मा हैं, और कि जिस काल में आप जीते हैं वह उनका ही शरीर है, आपके कल्याण के लिए दिया गया। फिर, विवेकी सात ऋषियों को भगवान् के धाम की सदा परिक्रमा करते देखकर, अपने हृदय को उनकी एक छोटी-सी परिक्रमा करने दीजिए, मन ही मन कहते हुए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” इस प्रकार, आकाश की ओर एक साधारण दृष्टि आराधना का एक क्षण बन जाती है, और सम्पूर्ण घूमता आकाश भक्ति में आपका गुरु बन जाता है।

उपसंहार

पंचम स्कन्ध का बाईसवाँ अध्याय सम्पूर्ण आकाश को एक स्तुति-गान बना देता है। सूर्य की प्रतीति और उसकी वास्तविक गति के विषय में राजा परीक्षित के विस्मयपूर्ण प्रश्न का उत्तर देते हुए, श्रीशुक आकाश की महान् व्यवस्था उद्घाटित करते हैं: स्वयं भगवान् नारायण अपने शरीर को सबके कल्याण के लिए मासों और ऋतुओं में विभाजित करते हुए; चन्द्रमा, सूर्य से तीव्र, देवताओं और पितरों के दिन नियत करता और प्रत्येक प्राणी पर अपना अमृत उँडेलता हुआ; काल-चक्र से बँधे नक्षत्र; शुक्र, बुध, मंगल, बृहस्पति और शनि, प्रत्येक अपनी नियत परिक्रमा रखते हुए; और, शिखर पर, सात ऋषि भगवान् विष्णु के परम धाम की अनन्त आराधना में परिक्रमा करते हुए। जो नक्षत्र-मण्डल का मात्र एक वर्णन हो सकता था, वह ऋषि के कथन में, प्रत्येक आत्मा के कल्याण के लिए भगवान् की काल और आकाश की कोमल व्यवस्था का एक प्रकाशन बन जाता है। इसे सुनना नई दृष्टि से ऊपर देखना है और स्वयं को एक ऐसी सृष्टि में धारित जानना है जो, अपने सबसे छोटे पौधे से लेकर अपने सर्वोच्च तारे तक, एक महान् भक्ति का कार्य है।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण, पंचम स्कन्ध, द्वाविंश अध्याय, “The relative position of the planets and their movements।”
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञान • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश-रूप में। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संरक्षण अथवा समर्थन का कोई भाव अभिप्रेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-5-chapter-22-movements-of-the-planets-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञान • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट